वर्तमान परिपेक्ष में स्मृति ग्रंथों की प्रासंगिकता

डॉ रामानन्द कुमार रमण
B.N.M.U Madhepura

शोध सारांश

आज विश्व संक्रमण के दौर से गुजर रहा है । समय अतीत की ओर पीठ देकर करवट लेना चाहता है । अनागत भविष्य की अल्हड़ता की आहट मात्र से वर्तमान सहम उठा है । आज का युग बारूदी ज्वालामुखी के मुहाने पर बैठा विनाश की घड़ियाँ गिन रहा है और हम अध्यात्म ज्ञान को भूलकर अज्ञान की चादर ताने खर्राटे ले रहें है । हमारी वैधानिक संस्कृति अफीमची की तरह सड़क पर मोटरगाड़ियों के धक्के खाती लड़खड़ा रही है और हमारी सभ्यता बैसाखी टेके न्यायालयों की दरबाजे पर दस्तक दे रही है ।

विश्व के मानव सुख और शांति की खोज के लिए दर - दर भटक रहें हैं । तृष्णा की ज्वाला के वशीभूत होकर अपने अस्तित्व को खोते जा रहे हैं । चोरी, डकैती, घोटाले, भ्रष्टाचार, अपहरण, और स्वार्थपटुता में हम लिप्त होते जा रहे हैं फिर भी तृष्णा समाप्त होने के वजाय सुरसा की तरह मुह फैलाये जा रही हैं, अतएव सच्चा सुख एवम् परम कल्याण का मार्ग प्रशस्त करने के निमित्त तथा कलिकाल के विकराल क्लेश को निःशेष करने के लिए ही स्मृति ग्रंथों की वर्तमान परिपेक्ष्य में महती आवश्यकता महसूस की गई है ।

समस्त मानव जीवन में निरन्तर दो शक्तियों की क्रियाऐ और प्रतिक्रियाएं देखि जाति है । पहली है धार्मिक क्रियाएं दूसरी है अधार्मिक क्रियाएं । ये एक दुसरे के विरुद्ध निरन्तर काम करती है । हमारे चारो ओर वाह्य जगत में दिखायी देने वाली तथा अन्तर्जगत में उपलब्ध होने वाली समस्त जटिल घटनाओं की निरन्तर क्रीड़ा के कारण है । ये दो विपरीत शक्तियाँ वाह्य जगत में आकर्षण - विकर्षण अथवा केंद्राभिमुख - केन्द्राविमुख शक्तियों के रूप से और अन्तर्जगत में राग - द्वेष, शुभ- अशुभ के रूप में प्रकाशित होती है । इन दो विपरीत शक्तियों का कार्यक्षेत्र जितना उन्नत होता है उनका प्रभाव भी उतना ही तीव्र होता है ।

किन्तु धर्म ही मनुष्य के चिंतन और जीवन का सबसे उच्च स्तर है और हम देखते है कि धर्म जगत में ही इन दो शक्तियों की क्रियाएं सबसे अधिक परिस्फुटित होती है । मानव जाति को जिस तीव्रतम प्रेम का ज्ञान है वह धर्म से उत्पन्न है और वह घोरतम पैशाचिक विद्वेष का भी जिसे मानव जाति ने कभी अनुभव किया उसका भी जन्म स्थान धर्म ही है । संसार ने कभी भी जो महत्तम शांति की वाणी सुनी है वह धर्मराज्य के लोगों के मुख से निकली वाणी है । जगत ने कभी भी जो तीव्रतम निन्दा और अभिशाप की वाणी सुनी है वह भी धर्मराज्य के मनुष्यों के मुख से उच्चरित हुआ है ।

किसी धर्म का उद्येश्य असहिष्णुता नहीं, सहानुभूति नहीं, राग या द्वेष को फैलाना नहीं अपितु संसार में शांति प्रवाहित करना, बहुजन हिताय बहुजन सुखी की धरा प्रवाहित करना है । किन्तु धर्म बचाने की प्रेरणा से संसार में जितनी खून की नदियाँ बही है, मनुष्य की और किसी प्रेरणा ने वैसा नहीं

किया । धर्म प्रेरणा से जितने चिकित्सालय, धमशाला, अन्नदान आदि क्षेत्र बने उतने किसी दूसरी प्रेरणा से नहीं । इन विभिन्न धर्मो सम्प्रदायों के संघर्ष से निकले हुए इस द्वन्द कोलाहल, विवाद, अविश्वास और ईर्ष्या, द्वेष से समय - समय पर इस प्रकार की बज्रगंभीर वाणी निकली है जिसने इस सारे कोलाहल को दबाकर संसार में शांति और मेल की तीव्र घोषणा की है । उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव तक उसके बज्रगंभीर आह्वान के श्रवणार्थ मानव जाति बाध्य हुई है ।

भारतीय स्मृतियाँ इसी परम्परा की एक धीर - गंभीर ध्वनि है जिसमें समस्त मानव जाति का उत्थान निहित है । स्मृतियों के बताये मार्ग का अनुसरण करने पर ही सर्व धर्म एवम सार्वजनीन बंधुत्व की व्यवस्था की जा सकती है नीति कारों ने ठीक ही कहे है -

"अयं निजः परोवेत्ति गणना लघु चेतसाम ।
उदारचरितानां तु बसुधैव कुटुम्बकम ॥" [2]

स्मृतिग्रन्थ एक आलोक स्तंभ है जिसका प्रकाश मानवीय सहिष्णुता सामाजिक व्यवस्था एवम् धार्मिक राज्य की स्थापना करने में सक्षम है । स्मृति ग्रंथों के प्रमुख चार अंग है -

(1) आचार विषयक (2) व्यवहार विषयक (3) प्रायश्चित सम्बंधी (4) कर्मफल सम्बंधी ।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र इन चारो वर्णों तथा ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और सन्यास इन चारो आश्रमों के समुचित निर्वाह की विधियों का विशद विश्लेषण करना ही स्मृतियों का प्रधान विषय है ।

कतिपय पाश्चात्य एवम् पौरस्तय विद्वानों ने इस स्मृति ग्रंथो की एक पक्षीय व्याख्या कर एक वर्ग विशेष का हितसूचक कहा है जो सर्वथा भ्रान्त है, क्योंकि भारतीय मनीषी वसुधैव कुटुम्बकम की भावना से सर्वथा भावित रहे है । इन क्रांतदर्शियों की वाणी एक पक्षीय नहीं अपितु सार्वजानिक हित के लिए है । आर्ष विचार सम्बोधित करता है - हे मानव ! तुम जो वर्तमान जीवन जी रहे हो तुम्हारा यही पर्याप्त नहीं है । इसके आगे भी अनंत जीवन है । वेड के ऋषियों ने कहा है "मनुर्भवः" मनुष्य बनो । जब हम मनुष्य ही है तो फिर मनुष्य क्या बनेंगे ? श्रीमद् भगवद गीता में भी श्री कृष्ण कहते है -

" सर्व धर्मान परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वां सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥" [2]

ऋषि कहते हैं यदि तुममें मनुष्य की वृति रही, मनुष्य बनके जीवन त्यागा तब तुम्हे मनुष्य योनि ही मिलेगा, कही पशु वृत्तियों को अपनाकर संसार त्याग किया तो तिर्यक योनि में जाना भी निश्चित ही है ।

"जितो धर्मो ह्यधर्मेण सत्यं चैवानतेन च ।
जिता चौरश्चौरश्च राजानः स्त्रीभिःच पुरुषाः जिताः ॥" [3]

इस प्रकार वैदिक युग से लेकर आज जितने महापुरुष हुए ब्रह्मा जी से लेकर महर्षि मेंही पर्यन्त सबो ने अपने दृष्टिकोण से सुधर का ही तरीका बताया ।

"आवागमन सम दुःख दूजा है नहीं जग में कोई ।" इसके अलावे आधुनिक युगीन महात्मा न्यूटन, महात्मा आइन्स्टीन, पूर्व महामहिम डॉ० ए० पी० जे० कलाम सबों का मन्तव्य ऋषियों से ही मिलता है, मात्र शब्द का भेद है । अतः ये सार्वभौमिक सत्य है -

"कृण्वन्तो विश्वम् आर्यम्"

सन्दर्भ ग्रन्थ :-

1. नीतिश्लोकः
2. श्रीमद् भगवद्गीता 18-60
3. पराशर स्मृति प्रथम अध्यायः
4. महर्षि मेंही पदावली
5. ऋग्वेद ।